उस्ताद अलाउद्दीन खाँ साहब की विदेश यात्राओं का वर्णन

डॉ0 रागनी स्वर्णकार
प्रवक्ता–संगीत विभाग
सी0एस0जे0एम0 विश्वविद्यालय
कानपुर

सारांश

संगीत जगत के महानायक उस्ताद अलाउद्दीन खाँ साहब ने अपनी विदेश यात्राओं में पेरिस, इंग्लैण्ड, बुडापेस्ट, वियेना, मिस्र, पेलिस्टाइन, तुर्की, ग्रीस, रूमानियाँ, बुल्गारिया, येरूस्लम, जाफा, स्मार्णना, स्विटजरलैण्ड, पोलैण्ड, आस्ट्रिया, चैकोस्लाविया, यूगोस्लाविया, हंगरी, बेल्जियम, स्वीडन, एकार, फ्रांस आदि स्थानों पर गये और उनके कार्यक्रम अत्यंत सफल हुए तथा विदेशों में उनके संगीत की काफी सराहना की गयी तथा उन्होंनें अनुभव किया कि पश्चिमी संस्कृति और शिक्षा ज्ञान में बहुत आगे थी तथा उनके अनुसार यूरोप में अपने ज्ञान विज्ञान के सहारे आध्यात्मिक ताकत बढ़ाई और वहाँ आदमी–आदमी के समान जीना सीख गया। उन्होंने यह भी पाया कि वहाँ के निवासियों का भारत देश की कला और संस्कृति के प्रति असीम भेदभाव था तथा भारतीय संगीत के लिए पेरिस के लोगों में प्रचण्ड उत्साह था।

उस्ताद अलाउद्दीन खाँ ने संगीत के क्षेत्र में वॉयलिन व सरोद वादन के द्वारा अधिक ख्याति प्राप्त की थी। इनके वादन से प्रभावित होकर प्रसिद्ध नृत्यकार पं0 रविशंकर के बड़े भाई श्री उदयशंकर ने इन्हें अपनी नृत्यमंडली में संगीत निर्देशक के लिए आमंत्रित किया किन्तु खाँ साहब ने कहा कि मैहर महाराज की अनुमति के बिना कुछ नहीं कर सकता हूँ। इसके बाद मैहर महाराजा की स्वीकृति से सन् 1937 में अलाउद्दीन खाँ उदयशंकर की नृत्य मण्डली में निर्देशक के पद पर एक वर्ष के लिए यूरोप गये। उस मण्डली में उदयशंकर, रविशंकर, जौहरा बेगम, समणी, यहूदी मैनेजर एवं 8–9 आदमी थे। वहाँ से यही लोग इस मण्डली के साथ पेरिस, इंग्लैण्ड, बुडापेस्ट, वियेना, मिस्र, पेलिस्टाइन, तुर्की, ग्रीस, रूमानियाँ, बुल्गारिया, येरूस्लम, जाफा, स्मार्णना, स्विटजरलैण्ड, पोलैण्ड, आस्ट्रिया, चैकोस्लाविया, यूगोस्लाविया, हंगरी, बेल्जियम, स्वीडन, एकार, फ्रांस आदि स्थानों पर गये जहाँ पर इस मण्डली के कार्यक्रम काफी सफल हुए। इस विदेश यात्रा के दौरान खाँ साहब ने इंग्लैण्ड, पोलैण्ड, बेल्जियम, फ्रांस, पेरिस, ग्रीस में अपने एकल सरोद वादन के कार्यक्रम भी प्रस्तुत किये और वहाँ भी इन्होंने अत्यंत प्रसिद्धि अर्जित की।

यूरोप यात्रा के दौरान बाबा जब उदयशंकर व उनकी टोली के साथ जब पहली बार जहाज पर चढ़े तो उन्हें यह अनुभव हुआ कि उनका बचपन फिर से उनकी स्मृति में आया। यहाँ पहुँचने पर बाबा को खाना खाने में जब काँटा और छुरी प्रयोग करने के लिए दिया गया तो उन्हें बड़ी परेशानी का सामना करना पड़ा। चूँकि काँटा और चम्मच चलाने के मामले में वह बिल्कुल अनभिज्ञ थे। फिर भी किसी तरीके से शांतिपूर्वक वह अपना खाना निपटाते थे। खाना खाते समय जब उनका मुँह ज्यादा खुल जाता था या आवाज अधिक होती थी तो सारे लोग उन पर बिगड़ते थे किन्तु बाबा उस ओर ध्यान नहीं देते थे। इस तरह से बाबा ने बड़े–बड़े होटलों में और बड़े–बड़े साहब लोगों की बड़ी–बड़ी पार्टियों में उन्होंने अपना काम चलाया। उन्होंने जहाज, पेरिस और डिव्हेन शायर में एल्महर्स्ट के घर सभी जगह चार पैसे की कड़वी नीम की दातून से दाँत साफ किये तथा स्नानगृह में अपने हाथों से ही बनियान साबुन लगाकर धोई। सोते समय लुंगी लपेट लेते थे और खाना खाने के लिए अलग से सूट नहीं सिलवाया। एक ही सूट से सारे काम उन्होंने चलाये और कार्यक्रमों के दौरान धोती और कुर्ता ही पहना। जहाँ तक यूरोप के भोजन का प्रश्न था उन्हें बिल्कुल अच्छा नहीं लगा।

बाबा ने यूरोप जाने के पश्चात् वहाँ के लोगों में संगीत के प्रति बहुत बड़ा रूझान देखा और इस संदर्भ में उन्होंने 'मेरी कथा' में वर्णन किया है– ''भारत के संगीत के लिए पेरिस के लोगों में प्रचण्ड उत्साह था। हमारा संगीत मन में अत्यंत सूक्ष्म स्पंदन निर्माण करता है इसका अहसास उन्हें होता था। यह सब देख–सुनकर मुझे बहुत आनन्द होता और लगता कि एक न एक दिन हमारे संगीत का मर्म सारी दुनियाँ के गुणी–ज्ञानी जान लेंगे।''[1]

यूरोप का भोजन बाबा को बिल्कुल पसंद नहीं आया, क्योंकि वहाँ की सब्जी में न हल्दी न मिर्च, केवल उबाल कर धर देते। जहाँ तक माँस–मच्छी का प्रश्न था बाबा उसे नहीं खाते थे और दूसरी तरफ उबले हुए माँस मच्छी की बहुत बड़ी दुर्गन्ध आती थी जिससे बाबा का मन विचलित होता था। शेष सभी लोग प्रेमपूर्वक खाते। एक दिन इंग्लैण्ड में एक लार्ड के घर एक लड़की ने कच्चा माँस मुँह में डाल लिया। यह देखकर बाबा का जी अजीब सा हुआ और उन्होंने उस लड़की से कहा– ''राक्षसी! कच्चा मांस खाती हो। अब मुझे मत छूना।''[2]

बाबा ने इंग्लैण्ड में परमल मुट्ठी भर–भर कर खाये और उनकी टोली के अधिकतर लोग चना–परमल भक्त बन गये थे। दूध और दही भी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध था किन्तु बाबा को वहाँ की

भाषा बिल्कुल ही समझ में नहीं आती थी। लेकिन इससे उनको इसलिए परेशानी नहीं हुई क्योंकि श्री उदयशंकर आदि को फ्रेंच, जर्मन, अंग्रेजी, इन भाषाओं का बहुत ही अच्छा ज्ञान था और उदय शंकर जी ही उनके साथ दुभाषिये का काम करते थे। बुडापेस्ट, विएना, पेरिस में अनेक संगीतज्ञ (गायक व वादक) गायन व वादन की चर्चा करने आते थे। इस चर्चा के दौरान उदयशंकर ही बिचौलिया का काम करते थे और बाबा को कभी–कभी भाषा ज्ञान न होने के कारण से आत्मिक कष्ट होता था।

विएना, पेरिस, बुडापेस्ट इत्यादि शहरों में संगीत और कला के प्रति आस्था बाबा को विशेष रूप से दिखाई दी। इनमें से प्रत्येक शहर में विशेषकर संगीत के लिए एक बड़ा संगीत कक्ष था और यह इस तरीके से निर्मित किया गया था कि कहीं भी बैठें तो संगीत की सूक्ष्म सी झनकार भी सुनाई देती थी। बाबा ने 'मेरी कथा' में लिखा है कि – ''ऐसे श्रोताओं के सामने बजाने में मुझे बड़ा उत्साह लगता तथा मैं तन्मयता से बजाता और खुद को भूलकर तो मैंने भारत में भी कभी इतना कहीं नहीं बजाया था। मेरी लकड़ी का निर्जीव वाद्य सजीव हो उठता था। यूरोप के श्रोताओं के सामने बजाकर मुझे जो आनन्द मिला वैसा और कहीं भी नहीं मिला।''[3]

एक दिन होटल में बाबा के समक्ष कुछ अमेरिकन और जवान लड़कियाँ उनका सरोद सुनने के उद्देश्य से आयीं जैसा कि विदित है कि अमेरिकन युवतियाँ बड़ी चुलबुली मानी जाती हैं किन्तु उनके यहाँ ओरिएण्टल म्यूजिक की फैशन ही हैं। बाबा ने सोचा कि यह सुनना चाहती होंगी और दोपहर के तीन बजे के समय बाबा ने खींचकर भीमपलासी प्रारम्भ किया। किन्तु प्रारम्भ करते ही उन्हें आभास हुआ कि यह वैसी लड़कियाँ नहीं है और अत्यंत ध्यानपूर्वक बाबा के लगाये गये सुरों के अंदर प्रवेश करती नजर आ रही थीं। इससे बाबा को बहुत प्रसन्नता हुई और उन्होंने तन्मयतापूर्वक तीन घण्टे तक सरोद वादन किया।

रूमानिया, बुलगेरिया, चेकोस्लोवाकिया, यूगोस्लाविया, हंगरी, आस्ट्रिया, पोलैण्ड, स्विटजरलैण्ड, बेल्जियम, स्वीडन, फ्रांस आदि देशों के बड़े–बड़े शहरों में बाबा व अन्य लोगों ने चार महीने तक कार्यक्रम प्रदान किये। हर जगह सम्मान, प्रशंसा, राजे–रजवाड़े, मंत्री–प्रेसीडेण्ट आदि की दावतें तथा समाचार पत्रों में बहुत सारी तस्वीरें छपती और थियेटर में अपार जनसमूह उमड़ पड़ता था। श्री उदयशंकर जब स्टेज पर अपनी नृत्यकला का प्रदर्शन करने के लिए आते तो थियेटर के लोगों की तालियों के बौछारों से ऐसा प्रतीत होता कि थियेटर सिर पर गिरने जा रहा है। फूलों के गुच्छों से रंगमंच परिपूर्ण हो जाता था। रात्रि

में घर जाते समय श्री उदयशंकर को देखने के लिए लोग समूह बनाकर खड़े रहते थे। केवल लंदन को छोड़कर यूरोप में सभी जगह अपार जनसमूह कार्यक्रमों को सुनने के लिए आता था।

वास्तव में यूरोप में बाबा ने जो देखा उसमें उन्हें कुछ भी कुरूप नहीं दिखाई दिया। वहाँ लड़के–लड़कियों का निर्बन्ध मेल–जोल, तैरना, समुद्र के किनारे धूप में लेटे रहना, खेल–नाच–गाना कुछ भी बाबा को अटपटा नहीं लगा। बाबा के अनुसार ''यूरोप के स्त्री पुरुषों का आचरण मुझे कुछ अच्छा नहीं लगेगा, ऐसा लगा था मुझे लेकिन खुद की आँखों से देखा तो गलतफहमी दूर हो गयी। कुछ चरित्रहीन लोग यहाँ–वहाँ दोनों ही जगह हैं लेकिन हम जिनसे मिले, जिनसे हिल–मिल गये, उन्होंने यूरोप के बारे में मेरी सारी धारणा साफ बदल डाली। यूरोप के लिए मेरे मन में श्रद्धा की ही भावनायें उभरी। एल्महर्स्ट की बेटी बिआत्रिस और एलिस बोन देवी के समान हैं। भारत के लिए उनकी श्रद्धा भक्ति देखकर चकित होना पड़ता है।''[4]

अपने देश वापस आने के पश्चात् काशी के पास नृत्य–गायन की शाला को स्थापित करने के लिए श्री उदयशंकर ने निश्चय किया परन्तु बाद में अल्मोड़ा में यह शाला स्थापित हुई और इस विद्यालय के लिए एलिसबोन और बिआत्रिस ने उदय की बहुत सहायता की थी। बिआत्रिस ने कुछ लाख रूपये और रिकार्ड, साज, कपड़े और सजावट का सामान बहुत कुछ दिया था। वह सब मेरे साथ भारत में ही आया था। बिआत्रिस और बोन ने सभी लोगों की इतनी मदद की थी कि बाबा उसका अपने शब्दों में वर्णन नहीं कर सके। बाबा ने यह पाया कि वहाँ के लोगों में भारत देश की संस्कृति और कला के प्रति असीम भक्ति–भाव था। वास्तव में यूरोप में उन्होंने जो–जो देखा और अनुभव किया उससे वह बहुत ही प्रभावित हुए और इस तरह से विदेशों में बाबा ने अपने संगीत की छाप वहाँ के निवासियों पर अमिट रूप से छोड़ी।

संदर्भ–

1. बाबा अलाउद्दीन खाँ स्मृति संगीत समारोह, स्मारिका, मैहर (20–21 मार्च 1998), '*मेरी कथा*' उस्ताद अलाउद्दीन खाँ से उद्धृत।
2. वही (27–28 फरवरी 2002) '*मेरी कथा*' से उद्धृत।
3. वही।
4. वही।